Rigveda
ओ३म्
AUM
Yajurveda
Samaveda
Atharvaveda
वेदाङ्ग (Vedāng)
(KNOWLEDGE FROM THE VEDAS)
आर्य प्रतिनिधि सभा फीजी - प्रचार कमीटी
Arya Pratinidhi Sabha Fiji
P. O. Box 4245, Samabula.
Phone / Fax 386044

OCTOBER – DECEMBER ISSUE 1998
NO. 19

संस्कार

पिछले अंक से आगे

वेदारंभ संस्कार

वेदारम्भ सोलह संस्कारों में ग्यारहवें स्थान पर है। वेदारंभ दो शब्दों से बना हुआ है। वेद तथा आरम्भ। *वेद* का अर्थ *ज्ञान* तथा *आरम्भ* का अर्थ *शुरू करना* अर्थात *पढ़ाई शुरू करना*। अब बालक तथा बालिका विद्याप्राप्त करने के लिये पाठशाला जाते हैं। शिक्षाकी वैदिक विचारधारा में छात्र को इतना महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है कि उसी के जन्म सुधार के लिये सोलह संस्कार निर्धारित किये गये हैं। वैदिक ऋषियों का कहना है कि बच्चों पर निम्न तीन प्रकार के संस्कार प्रभाव डालते हैं जिन का देखरेख शिक्षकों का काम है।

(१) उसके अपने पिछले जन्मों के संस्कार।
(२) माता पिता के संस्कार।
(३) वातावरण द्वारा पड़ने वाले इस जन्म के संस्कार।

बच्चों की शिक्षा क्या है, मानों 'संस्कारों' का एक सिलसिला है। वैदिक संस्कार शास्त्रियों ने बालक के भावी जीवन के निर्माण के सम्बन्ध में निम्न पांच पहलुओं पर विचार किया है।

(१) वातावरण
(२) शिष्य अथवा ब्रह्मचारी
(३) गुरू अथवा आचार्य
(४) अध्यापन के विषय
(५) जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति

(१) बालक की शिक्षा का वातावरण

वैदिक दृष्टि यही है कि शिक्षा संस्थाओं को प्रकृति के शुद्ध वातावरण में रखने से ही छात्रों के मस्तिष्क को शुद्ध-संस्कारों में विकसित किया जा सकता है। आज शहर के विषैले वातावरण में शिक्षा संस्थाओंका निर्माण होता है, जहाँ उच्च कोटि के मानव का निर्माण करने के स्थान में लाखों रुपया खर्च करके उच्च कोटि की शिक्षा देने की, सिर्फ इमारतों का निर्माण होता है।

छात्र को शिक्षा देने के लिये स्वीकार करते हुए आचार्य उसे इस प्रकार सुरक्षित, संभाल कर रखता है, जैसे माता पुत्र को अपने गर्भ में सुरक्षित, संभाल कर रखती है। क्या गुरु शिष्य के सम्बन्ध का इससे ऊंचा चित्र खींचा जा सकता है? बच्चा माता के गर्भ में रहता है। माता स्वास लेती है, गर्भ स्वास नहीं लेता है, माता भोजन करती है, गर्भ भोजन नही करता, माता जल पीती है, गर्भ जल नही पीता, परन्तु माता के स्वास में उसका स्वास है, माता के भोजन में उसका भोजन है, माता के जल पान में उसका जल-पान है। गुरु तथा शिष्य के निकटतम सम्बन्ध को समझाने के लिए माता तथा गर्भ के सम्बन्ध से अधिक सुन्दर दूसरी उपमा दी जा सकती है?

(२) शिष्य अथवा ब्रह्मचारी

शिक्षा प्राप्त करने के लिये जो छात्र पाठशाला में प्रवेश होते उन्हें तीन नियमों का पालन करना चाहिये।

(१) विद्यार्थी को लगातार बहुत महेनत करना चाहिये, जिस में आलस्य के लिए कोई स्थान नहीं, जिस में हर समय सचेत रहना पड़ता है, जिसमें लगन-ही-लगन है, परिश्रम ही परिश्रम है, वैदिक भाषा में जिसे 'तपस्या' कहते है। विद्यार्थी को बताना चाहिये कि काम करते रहना, परिश्रम का जीवन बिताते रहना, निठल्ले मत रहना, रात को सोना, दिन सोने के लिये नहीं, काम करने के लिये है, क्रोध मत करना, झूठ मत बोलना तथा तपस्या का जीवन बिताना।

(२), आचार्य व्रत करके छात्र को आश्वासन देता है कि तेरे हृदय को मैं अपने हृदय में लेता हूँ। गुरु तथा शिष्य एक दूसरे के इतना निकट आने का प्रयत्न करते हैं कि एक मन वाले हो जायें। कितना भारी जिम्मेदारी डाल दी गई है गुरु के ऊपर। गुरु शिष्य के प्रति प्रतिज्ञा करता है कि जिम्मेवारी मैं अपने हाथों में लेता हूँ, और आने वाले जीवन के लिये तेरे दिल और दिमाग को सही दिशा देने की जिम्मेदारी लेता हूँ।

पहली बार बालक माता-पिता से जन्म लेता है, यह शरीर का जन्म है। दूसरी बार पाठशाला में जाकर गुरु को माता-पिता बना कर उससे शिक्षा लेना है, यह मानसिक जन्म है। अर्थात् विद्या प्राप्त कर लेने के बाद उसका दूसरा जन्म होता है।

(३) ब्रह्मचारी व्रत- 'ब्रह्मचारी' शब्द का अर्थ यह है कि जो बालक या बालिका, जीवन में महान होने की अभिलाषा को मस्तिष्क तथा हृदय में लेकर पाठशाला में जाते हैं। ब्रह्मचर्य का एक और अर्थ यह भी है कि वीर्य को नष्ट न करना, शुद्ध चाल-चलन रखना तथा सदाचार का जीवन, व्यतीत करना। यह वैदिक शिक्षा का दूसरा उद्देश्य है।

(३) गुरु अथवा आचार्य

शिक्षा देने वाले को वैदिक विचारधारा में 'आचार्य' कहा गया है। इस विचार धारा में जहां विद्यार्थी को ब्रह्मचारी या ब्रह्मचारिनी कहा गया है वहां शिक्षक को 'गुरु' अथवा 'आचार्य' कहा गया है। 'आचार्य का अर्थ है जो स्वयं सदाचारी बनकर अपने शिष्यों को भी सदाचार के जीवन में ढाल दे। वेदों में 'विद्यार्थी 'और 'आचार्य' शिक्षा के दो बिन्दु हैं। इन दोनों को मिलाने वाली रेखा 'सदाचार' है। अगर चाल-चलन ठीक नहीं तो आचार्य आचार्य नहीं, विद्यार्थी विद्यार्थी नही, शिक्षा शिक्षा नहीं। वह शिक्षा क्या जो सिर्फ फीसें जमा करके छात्रों को परीक्षा में पास करने भर का ठेका लेती है, उनके चरित्र-निर्माण

का ठेका नहीं लेती। ऐसी शिक्षण संस्थाएं शिक्षण संस्थाएं नहीं बल्कि अच्छी-खासी दुकानें हैं। आज हमारी शिक्षण संस्थाएं दुकानदारी बन गई हैं। चरित्र को तो शिक्षा का अंग ही नहीं समझा जाता। एक नई फिलासफी ने जन्म लिया है वह यह कि प्रायवेट लाइफ अलग है, पब्लिक अलग है। शिक्षक भी इस बात का दावा करने वाला है कि घर में वह चाहे जूआ खेले, शराब पीये, कुछ भी करे, उसकी प्रावेट लाइफ में दखल देने का किसी को अधिकार नही। जब शिक्षक का चरित्र ऐसा है, तब विद्यार्थी का चरित्र भी वैसा क्यों नही होगा? अगर आचार्य स्वयं एक बुझी हुई लकड़ी है, उसमें स्वयं कोई आग नही, वह पब्लिक में अलग है, प्राइवेट में अलग है, तो वह शिष्य को क्या प्रदीप्त करेगा। जलता हुआ दिया ही बुझे हुए दिये को जला सकता है।

"Character is not so much taught as caught"

अर्थात् आचार सिखाया नहीं, ग्रहण किया जाता है। आज की शिक्षा जगत् की समस्याएं विद्यार्थियों के कारण इतनी विकट नही जितनी शिक्षकों के कारण विकट बनी हुई है।

(४) अध्यापन के विषय

वैदिक शिक्षा का लक्ष्य सिर्फ किताबें पढ़ा देना नहीं, पुस्तकों के अध्ययन के साथ-साथ जीवन का आध्यात्मिक दृष्टिकोण (आत्मा-परमात्मा सम्बन्धि बातें) मानव के सम्मुख रखना है। जीवन में शरीर और पार्थिव-संसार ही नहीं, शरीर के भीतर आत्मा है, पार्थिव-जगत् के पीछे आध्यात्मिक-जगत् है। यजुर्वेद कहता है कि संसार की चमचमाहट से आध्यात्मिक सत्य आंखों से ओझल हो रही है, इस पर्दे को उठा देने से वह जगत दीखने लगता है, जिससे हम बेखबर रहते हैं। यथार्थ ज्ञान वह है जिसमें भौतिक तथा अध्यात्मिक विद्या का सम्मिश्रण हो। वैदिक दृष्टिकोण से भौतिक विज्ञान (material science) तथा आध्यात्मिक विज्ञान (spiritual science) दोनों को जानने से जीवन का पूरा रूप सामने आता है। सिर्फ एक को जानने से जीवन पूर्ण नहीं होता। जीवन में दोनों का अपना अपना स्थान है।

(५) जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति

शिक्षा संस्था में अध्ययन समाप्त करने के बाद जब विद्यार्थी घर को लौटता है, तब गुरु उसे उपदेश देते हुए कहता है कि गुरु के पास तुमने जो कुछ सीखा उससे तुमसे यह आशा की जाती है कि तुम जीवन में सत्य का आचरण करोगे, धार्मिक जीवन बिताओगे, माता-पिता की सेवा करोगे, अपने बड़ों का सम्मान करोगे। आज तो बार-बार यही रटा जा रहा है कि शिक्षा का उद्देश्य युवक-युवतियों को रोटी कमाने लायक बनाना है। रोटी कमाने लायक बनाना है, यह तो ठीक है, परन्तु शिक्षा का उद्देश्य इन्सान को इन्सान बनाना पहले है। चौदह-सोलह साल जब तक विद्यार्थी पढ़ते हैं, हम उसे नही बतलाते कि जीवन क्या है, सत्य क्या है, धर्म क्या है तथा जीवन का लक्ष्य क्या है। गुरु का कहना होना चाहिये कि रोटी तुम कमाओगे ही, पेट तो तुम भरोगे ही, परन्तु याद रखना, जो कुछ करना इन्सान बने रहना अर्थात् इन्सानियत के जो गुण सीखे हैं उन्हें कभी मत भूलना। *अगला अंक - समावर्तन संस्कार तथा विवाह संस्कार*

• • • • • •